PROBLEMS OF PUBLIC CORPORATIONS
लोक निगम की समस्याएँ

लोक निगमों को अपनी समस्यायें होती हैं। कुछ समस्यायें तो उनकी प्रारंभिक अवस्थाओं के कारण उत्पन्न होती हैं। साथ ही कुछ समस्याओं की उत्पत्ति उनके कार्यकरण के कारण होती है। हम लोक निगमों के निम्नलिखित समस्याओं का वर्णन कर सकते हैं।

(1) घाटे की समस्या → लोक निगमों को कुछ वित्तीय क्षेत्रों में संसदीय नियंत्रण से मुक्ति के कारण वे अपने कर्त्तव्यों की उपेक्षा करते हैं। सरकारी निगमों में जितनी संपत्ति लगाई जाती है उसका पूरा-२ लाभ नहीं मिलता। लोक निगमों में घाटे को सार्वजनिक कल्याणकारी कृत्यों की दृष्टि से बर्दाश्त किया जाता है किन्तु भारत जैसे विकासशील देश में उनका ~~व्यवसाय~~ अकसर घाटे में रहना स्वस्थता का चिह्न नहीं है।

(2) कार्य कुशलता की समस्या → लोक निगम सरकारी प्रबंध तथा व्यक्तिगत उद्यमों का मध्य मार्ग है और दुर्भाग्य से दोनों ही प्रकार की बुराईयों से ग्रस्त युक्त हैं। गुणों के स्थान पर कमजोरियाँ ही अधिक हैं। निगमों के विभागों जैसे नियम नहीं होते। व्यक्तिगत उद्यमों जैसा प्रेरणात्मक उपकरण नहीं होता। इसी कारण उसके संबंध में अनुशासन की समस्या बनी रहती है। जब कर्मचारियों को आकर्षण का कोई केन्द्र ही प्राप्त नहीं होता तो उनमें अकार्यकुशलता का उत्पन्न होना अस्वभाविक नहीं है। वरिष्ठ पदाधिकारी छोटे अधिकारियों के साथ प्रेरणात्मक व्यवहार नहीं करते। पदाधिकारियों की नियुक्ति के लिये सामान्य नियम नहीं होते। सरकारी सेवाओं के नियम उनके संबंध में लागू नहीं होते। पद वृद्धि के संबंध में अनियमितताओं के प्रयोग से उनकी कार्यकुशलता का स्तर गिर जाता है।

(3) वित्तीय समस्यायें → लोक निगमों की वित्तीय समस्यायें कम महत्वपूर्ण नहीं हैं। सरकारी निगमों में अधिकांश शासन के मामले दृष्टिगोचर होते हैं। संसदीय नियंत्रण की कमी अनियमितताओं को तो जन्म देती ही है। साथ में अकार्यकुशलता का भी बढ़ावा मिलता है। जनसेवा की अपेक्षा कर्मचारी व्यक्तिगत स्वार्थों की पूर्ति करते हैं।

(4) स्वायत्तता की समस्या → निगमों के संबंध में स्वायत्तता का प्रश्न भी का महत्वपूर्ण नहीं है। इस संबंध में मंत्रियों के हस्तक्षेप का भी प्रश्न आता है। एक बड़ी कठिनाई यह है कि किस प्रकार से सामान्य नीति एवं नित्य प्रति के कार्यों में अंतर किया जाय। एक समस्या यह भी है कि मंत्रियों का नियंत्रण कहाँ से शुरु और कहाँ इसका अंत हो? मंत्रीगण पर अपना नियंत्रण स्थापित कर ही रहा अलापते हैं। कुछ लोग यह भी कहते हैं कि निगमों को जरूरत से अधिक स्वायत्तता है। अनुमान समिति ने अपने प्रतिवेदन में इस ओर संकेत किया था कि निगमों की स्वायत्तता इस सीमा तक पहुँच गई है कि उन्होंने शासकीय नियमों की उपेक्षा करना शुरु कर दिया है। दूसरी तरफ ओरवाला ने अपने रिपोर्ट में कहा कि निगमों की स्वायत्तता पर प्रहार किया जा रहा है। अतः

Scanned with CamScanner

इन दोनों फिरकों की आलम की लड़ाई में नौकरशाही को बढ़ावा मिलता है और कर्मचारियों में निकम्मापन आ जाता है। वस्तुतः स्वायत्तता का प्रश्न एक विवाद का प्रश्न हो गया है।

(5) व्यक्तिगत क्षेत्र से प्रतिस्पर्धा → लोक निगमों को व्यक्तिगत उद्यमों के साथ प्रतियोगिता करना पड़ता है और निगमों की सफलता में यह बाधा है। व्यक्तिगत उद्योग के नियम सरकारी नियमों से श्रेष्ठ होते हैं। लोक निगम के कर्मचारी निगम के हित अहित को अपना हित अहित नहीं समझते परन्तु व्यक्तिगत निगमों में ऐसी बात नहीं है। वहाँ अच्छे कार्य करने वाले को प्रेरणा दी जाती है और उन्हें हर प्रकार से प्रोत्साहन दिया जाता है।

(6) संगठन में अनेकरूपता → प्रत्येक लोक निगम का संगठन, संचालन, सरकार के साथ संबंध तथा उसका रूप यह स्पष्ट करता है कि प्रत्येक कि अपनी समस्यायें हैं और उनमें एकरूपता का आभाव है। उदाहरणस्वरूप बिहार राज्य परिवहन निगम का स्वरूप और संगठन बिहार वित्त निगम की भाँति नहीं है। इसी भिन्नता के कारण कई प्रकार की समस्यायें भी उत्पन्न हो जाती हैं। मसलन यदि एक निगम के संचालक मंडल में सरकारी सदस्यों की संख्या 10 है और दूसरे में 7 तो स्वभाविक रूप से उन दोनों के तौर तरीकों तथा उनके व्यवहार में अंतर होगा। दिक्कत यह भी है कि एक निगम ने जो तजुर्बे हासिल किये हैं उनका फायदा अन्य निगम नहीं उठा पाते।

(7) विशेष समस्यायें → कुछ निगमों में तकनीकी विशेषज्ञों की कमी रहती है और कुछ में विदेशी पूँजी इतनी मात्रा में लगी रहती है कि उसका स्वदेशी स्वरूप ही समाप्त हो जाता है। कुछ निगमों को व्यक्तिगत उद्यमों से प्रतियोगिता करना पड़ता है। संसद सदस्यों के पास तकनीकी योग्यता का आभाव होता है, जिसके परिणामस्वरूप उसके वाद विवाद उच्च स्तर में नहीं हो पाते तथा संबंधित निगमों पर उनका कोई विशेष प्रभाव नहीं हो पाता। संसद तथा निगमों में निकट के संबंध नहीं हैं। दुर्भाग्य यह भी है कि निगमों की समस्याओं पर विचार करते समय उनके व्यापारिक हितों और उद्देश्यों की उपयोगिता को विमुख करके संसद ~~सद~~ सदस्य राजनैतिक प्रभावों में आकर राजनैतिक फ्री स्टाईल रेसलिंग का अखाड़ा बना बैठते हैं।

उपर्युक्त समस्याओं को देखकर ही गोरवाला ने लिखा था कि → "भारत में लोक निगमों का इतिहास दुःखद घटनाओं की एक श्रृंखला है।"

सुझाव → ARC के अनुसार → सार्वजनिक क्षेत्र के व्यापारिक एवं औद्योगिक उद्यमों के लिये सार्वजनिक निगम का संगठन स्वरूप सर्वोत्तम है। हमारा सुझाव है कि शासन को औद्योगिक नीति प्रस्तावों की घोषित लक्ष्यों को इस संदर्भ में क्रियान्वित करना चाहिये एवं

Scanned with CamScanner

भारत में सार्वजनिक क्षेत्र में औद्योगिक एवं व्यापारिक उद्यमों की पद्धतियो को सामान्य निगमों के रूप में ही स्वीकार किया जाना चाहिये।

ARC का यह भी सुझाव है कि लोक निगमों के प्रबंध में पर्याप्त मात्रा में स्वतंत्रता, निर्भिकता एवं परिश्रम की आवश्यकता है। इन्हें विभागीय पद्धति के नियंत्रणो के जटिल विलंबकारी तौर तरीको से मुक्त होना आवश्यक है।

परन्तु स्वायत्तता के उपयोग के लिये वांछित निगरानी एवं दायित्व तथा स्पष्टता एवं सहयोग की भावना का होना भी आवश्यक है।

ARC ने सार्वजनिक उद्यमो के ब्यौरों को निगमों की वार्षिक रिपोर्ट के लिये एक आदर्श प्रतिमान तैयार करने का सुझाव दिया है। भविष्य में भारतीय लोक प्रशासन के क्षेत्र में निगमों की भूमिका महत्वपूर्ण रहेगी ऐसा मत विद्वानो का है। अतः इसमें सुधार की आवश्यकता है।

—x—

Scanned with CamScanner